VISION AHEAD
(An Online Peer Reviewed/ Refereed Bilingual International Journal of Multidisciplinary Studies)
VOLUME 1, JAN-DEC 2023 **ISSN:**

मार्क्सवादी आलोचना में डॉ0 रामविलास शर्मा का योगदान

सोनी सिंह
प्रवक्ता, हिन्दी विभाग,
सुर्यबक्स पाल स्मारक महाविद्यालय,
बनकटी, बस्ती, उत्तर प्रदेश

सारांश

डॉ0 रामविलास शर्मा हिन्दी के प्रख्यात मार्क्सवादी समीक्षक, विचारक, भाषाविद् और कवि हैं। वे पूँजीवाद को सम्पूर्ण विश्व के लिए खतरा मानते हैं। डॉ0 शर्मा, कला और साहित्य में भेद नहीं करते, वे मानते हैं कि साहित्य का शिल्प, उसके विभिन्न रूप सामाजिक विकास से ही संभव हुए हैं। वे मानते हैं कि भाषा कभी भी विचार शून्य नहीं हो सकती है। वे आचार्य रामचन्द्र शुक्ल की आलोचना पद्धति से बहुत प्रभावित हैं। भारतेन्दु युग को वे हिन्दी भाषी जनता का जातीय साहित्य मानते हैं। महावीर प्रसाद द्विवेदी को इसलिए महत्व देते थे की वह पुरानी व्यवस्था को बदलने की मांग के समर्थक थे। उन्होंने प्रेम की अपेक्षा करुणा को महत्व दिया। डॉ0 शर्मा को प्रेमचंद इसलिए प्रिय लेखक लगते हैं कि उन्होंने साम्राज्य वादियों के द्वारा फैलाए गए भ्रमों को छिन्न–भिन्न कर दिया। प्रेमचंद की आवाज भारतीय जनता की अजय आवाज थी। निराला के स्वाधीनता प्रेम नारी व प्रकृति के मोहक चित्र, नए मानवतावाद के प्रतिष्ठापक, सौंदर्य उल्लास के कवि के रूप में स्वीकार किया। डॉ0 शर्मा ने तीन कवियों मुक्तिबोध, शमशेर, और नागार्जुन का भी मूल्यांकन किया, उनकी इतिहास दृष्ट कार्म्सवादी थी। वे मानते थे कि भाषा का अध्ययन, उसकी ध्वनि–प्रकृति, भाव–प्रकृति, मूल्य शब्द भण्डार को दृष्टि में रखकर करना चाहिए। उनकी विवेचना पद्धति पर आचार्य शुक्ल का प्रभाव है। प्रतिपक्ष की मान्यताओं का खण्डन, व्यंग भर्त्सना करते हैं, किन्तु अनपे मत को प्रमाणिक मानकर निर्णय करते हैं।

डॉ0 राविलास शर्मा हिन्दी के प्रख्यात मार्क्सवादी समीक्षक, विचारक, भाषाविद् उवं कवि हैं। इनका कृतित्व हिन्दी की उवलब्धि है। प्रेमचन्द (1941 ई0), भारतेन्दु युग (1943 ई0), निराला (1946 ई0), प्रगति और परम्परा (1949 ई0), साहित्य और संस्कृति (1946 ई0), प्रेमचन्द और उनका युग (1952 ई0), भारतेन्दु हरिश्चन्द (1953 ई0), भाषा, साहित्य और संस्कृति (1954 ई0), प्रगतिशील साहित्य की समस्याएं (1954 ई0), आचार्य रामचन्द्र शुक्ल और हिन्दी आलाचना (1955 ई0), लोक जीवन और साहित्य (1955 ई0), स्वाधीनता और राष्ट्रीयता साहित्य (1956 ई0), आस्था और सौन्दर्य (1961 ई0), भाषा और समाज (1961 ई0), साहित्य स्थायी मूल्य और मूल्यांकन (1968 ई0), निराला की साहित्य साधना प्र0स0 (1969 ई0), निराला की साहित्य साधना द्वितीय खण्ड (1972 ई0), भारतेन्दु युग और हिन्दी साहित्य की विकास परम्परा (1975 ई0), निराला की साहित्य साधना तृ0ख0 (1976 ई0), महावरीप्रसाद द्विवेदी और हिन्दी नवजागरण (1977 ई0), नयी कविता और अस्तित्ववाद (1978 ई0), भारत के प्राचीन भाषा–परिवार और हिन्दी (तीन खण्ड 1979, 1980 एवं 1981 ई0), परम्परा का मूल्यांकन (1981 ई0), भाषा युग बोध कविता (1981 ई0), भारत में अंग्रेजी राज और मार्क्सवाद (दो खण्ड 1982 ई0), कथा–विवेचना और गद्य–शिल्प (1982 ई0), मार्क्सवाद और प्रगतिशील साहित्य (1984 ई), लोक जागरण और हिन्दी साहित्य (1985 ई0), (सम्पादित), हिन्दी जाति का साहित्य (1986 ई0), भारतीय साहित्य के इतिहास कह समस्यायें (1986 ई0), मार्क्स और निछड़े हुए समाज (1986 ई0) आदि अनेक कृतियाँ प्रकाशित हो चुकी हैं। 'मानव सभ्यता का विकास' और अठारह सौ सत्तावन की राज्य क्रान्ति, पंचरत्न (1980 ई0), घर की बात शीर्षक से अपने परिवार का इतिहास भी प्रस्तुत किया है। खण्ड–1, स्वाधीनता संग्रामः बदलते परिदृश्य 2, भारतीय इतिहास और ऐतिहासिक भौतिकवाद भी प्रकाशित हो चुके हैं।

डॉ0 शर्मा ने लिखा है कि 'चाहे मनुष्य के प्राकृतिक परिवेश का सवाल हो चाहे पूंजी के केंद्रीकरण का, एक द्रव्य संसार के निर्माण और इस संसार के भीतर तेजी से बढ़ते अंतर विरोधियों का सवाल हो, हर मुद्दे पर मार्क्सवाद की स्थापना खरी उतरी है। मार्क्सवादी अप्रासंगिक नहीं है अपराधिक हैं मानव–जाति के भविष्य के लिए

पूंजीवाद। पूंजीवाद संसार का पुनर्गठन कैसे करें, यह हम मार्क्सवाद से सीखते हैं।' डॉ0 शर्मा की चेतावनी है विदेशी पूंजी को बुलावा देकर सोवियत संघ जैसा राष्ट्र अपनी एकता की रक्षा नहीं कर पाया, उस रास्ते पर चलकर भारत अपनी एकता की रक्षा कर सकेगा, इसमें बहुत संदेह है। आपकी पश्चिम एशिया और इतिहास दर्शन की कृतियां है।

इतिहास–दृष्टि

डॉ0 शर्मा की इतिहास–दृष्टि मार्क्सवादी है। इतिहास के भौतिकवादी व्याख्या प्रस्तुत करते हैं। द्वन्द न्याय के आधार पर सामाजिक विकास की विवेचना करते हैं सामाजिक यथार्थ को महत्व देते हैं। उन्होंने कबीर, तुलसी, मीरा, भारतेंदु, महावीर प्रसाद द्विवेदी, रामचंद्र शुक्ल, प्रेमचंद, वृंदावन लाल वर्मा, निराला, प्रसाद नरेंद्र शर्मा, केदार, शमशेर, मुक्तिबोध, नागार्जुन आदि को मत देते हुए अपने सिद्धांतों को व्यावहारिक स्तर पर पुष्ट किया है। डॉ0 शर्मा कहते हैं कि शुक्ल जी का आदिकाल वास्तविक मध्यकाल है, हिंदी जनपदों के इतिहास का सांमत काल है। (हिन्दी जाति का साहित्य, पृष्ठ–122)

आचार्य शुक्ल ने जिसे 'पूर्व मध्य काल' कहा है, उसे डॉ0 शर्मा 'लोक जागरण काल' कहते हैं। इसी काल से डॉ0 शर्मा हिन्दी साहित्य के आधुनिक काल कीा शुरूआत मानते हैं। शुक्लजी ने भारतेन्दु–युग से आधुनिक–युग का आरम्भ माना है। डॉ0 शर्मा इसे 'लोक जागरण का दूसरा उत्थान मानते हैं। उनके अनुसार 1857 के स्वतन्त्रता संग्राम से हिन्दी–प्रदेश में नव जागरण का आरम्भ मानना चाहिए। आचार्य महावीरप्रसाद द्विवेदी का युग 'हिन्दी नव जागरण' का युग है। सामन्तवादी सामाजिक ढाँचे के भीतर व्यापारिक पूँजीवाद के विकास के साथ आरम्भ होने वाले व्यापक सांस्कृतिक जागरण से ही वे आधुनिक काल की शुरूआत मान लेते हैं। उनकी दृष्टि में भारतीय साहित्य की मौलिक धारा यथार्थवादी है। प्रगतिशील दृष्टि और यथार्थवादी चेतना को आधार बनाकर उन्होंने पूरी ऐतिहासिक परम्परा का मूल्यांकन किया है।

साहित्य और कला–चिन्तन

डॉ0 शर्मा ने कहा है कि – 'कला के विषय वस्तु ना वेदांत यों का ब्रह्म है। न हेगेल का निरपेक्ष विचार। मनुष्य का इंद्रिय बोध, उसके भाव, उसके विचार, उसका सौंदर्य–बोध कला की विषयवस्तु है। 'डॉ0 शर्मा कला और साहित्य में भेद नहीं करते। 'साहित्य के सभी तत्व समान रूप से परिवर्तनशील नहीं हैं। युग बदलने पर जहां विचारों में अधिक परिवर्तन होता है जहां इंद्रियबोध और भाव–जगत में अपेक्षाकृत स्थायित्व रहता है। डॉ0 शर्मा शाश्वत सत्य जैसी कोई चीज नहीं मानते। साहित्य का शिल्प उसके विभिन्न रूप सामाजिक विकास से ही संभव हुए हैं। जनता तक साहित्य पहुँचाने के साधनों में जो परिवर्तन हुए, उनका प्रभाव उनके प्रभाव उनके रूपों पर भी पड़ा। वे कहते हैं कि 'साहित्य में रूप और वस्तु एक दूसरे से सम्बद्ध ही नहीं, एक दूसरे को प्रभावित भी करते हैं।' निर्णायक भूमिका हमेशा विषय–वस्तु की ही होती है। साहित्य में विषय–वस्तु को भाषा से अलग नहीं किया जा सकता, इसलिए भाषा की चर्चा करना ही काफी है। ''भाषा विचार शून्य नहीं हो सकती। इसलिए भाषा का विश्लेषण विचारों के विश्लेषण के अभाव में अधूरा माना जायेगा। इन्द्रियाबोध की परिष्कृत होकर भाव–जगत का निर्माण करता है। सौन्दर्य की इस वस्तुगत सत्ता, सामाजिक विकास से उसके सापेक्ष सम्बन्ध, कला और साहित्स के रूपों के अनुसार उसकी विषय–वस्तु की विविधता को ध्यान में रखकर ही हम सौन्दर्य–शास्त्र का सही विवेचन कर सकते हैं। (सामालोचक सौन्दर्य शास्त्र विशेषांक)

डॉ0 शर्मा आचार्य रामचन्द्र शुक्ल की आलाचना–पद्धति से विशेष प्रभावित है। शुक्ल जी की आलाचना गम्भीर है, इसलिए कि उसका आधार वस्तुवादी है। शुक्ल जी की गम्भीरता का दूसरा कारण उनकी तर्क और चिन्तन–पद्धति है। इस पद्धति को हम द्वन्द्व नाम दें, तो अनुचित न होगा। विरोधी लगने वाली वस्तुओं का सामंजस्य जहचानना, उन्हें गतिशील और विकासमान देखना, संसार के विभिन्न भौतिक और मानसिक व्यापारों का परस्पर सम्बन्ध स्थापित करके उनका अध्ययन करना इस पद्धति की विशेषताएं है।1

समीक्षा

डॉ0 शर्मा ने लिखा है कि 'भारतेन्दु युग का साहित्य हिन्दी भाषी जनता का जातीय साहित्य है। वह हमारे जातीय नवजागरण का साहित्य है। भारतेन्दु–युग की जिन्दादिली उसके व्यंग्य और हास्य, उसके सरल, सरस गद्य और लो–संस्कृति से उसकी निकटता से सभी परिचित है। ये उसकी जातीय विशेषताएँ है अंग्रेजी साम्राज्यवाद और अंग्रेजी साहित्य एक ह वस्तु नही है। भारतेन्दु–युग के साहित्य ने केवल अंग्रेजी साहित्य से वरन् बंगला साहित्य से भी प्रेरणा पायी है। लेकिन उसके साहित्य की जड़े इस धरती में है और ऊपर बतायी हुई उसकी जातीय विशेषताएँ उसकी अपनी मौलिक हैं। 2 महावीरप्रसाद द्विवेदी को डॉ0 शर्मा ने इसलिए महत्व दिया कि वे पुरानी व्यवस्था का बदलने की मांग के समर्थक थे। ''साहित्य में जो रीति–विरोधी क्रान्ति शुरू हुई, उसका पहला चरण है द्विवेदी–युग और उसी का विकास छायावाद और प्रगतिवाद में होता है। ये तीनों युग एक दूसरे से भिन्न हैं, साथ ही एक दूसरे के पूरक भी हैं। द्विवेदी युग की भूमिका आधुनिक साहित्य का मार्ग प्रशस्त करने वाले अग्रदल की भूमिका है। 3 'प्रेम' की अपेक्षा 'करूणा' को अधिक महत्व दिया। डॉ0 शर्मा आचार्य शुक्ल के विचारों पर लिखते हैं– 'उनकी शैली तार्किक विवेचन के लिए उपयुक्त होने के साथ आवश्यकतानुसार आवेशपूर्ण और आलंकारिक भी है और उसकी एक विशेषता जीवन का संचित अनुभव प्रकट करने वाली वाक्यावली है। शब्द–चयन में उर्दू के प्रचलित शब्दों से उन्हें परहेज नहीं है। उनका व्यक्तित्व एक सहृदय और विनोदी, साहित्य प्रेमी और संसार–प्रेमी मनुष्य का है, पुस्तक सेवी सन्यासी का नहीं। उनकी निर्भीकता, दृढ़ता, गहन अध्यवसाय और आत्मविश्वास के गुण उनके काव्य–सिद्धान्तों और साहित्यालोचन की ही तरह हिंदी–प्रेमियों के लिए शिक्षाप्रद और प्रेरणा–दायक है। 4 प्रेमचंद भी डॉ0 शर्मा के प्रिय लेखक हैं। उन्होंने ''साम्राज्यवादियों और फैलाए गए भ्रमों को छिन्न–भिन्न कर दिया।'' उनका साहित्य तत्कालीन हिंदुस्तान और उसके स्वाधीनता–आंदोलन का प्रतिविम्ब है। उन्हें जीवन के विविध क्षेत्रों का विस्तृत ज्ञान था और वे समस्याओं को यथार्थ रूप से प्रस्तुत करते थे। वे महाजनी सभ्यता के विरोधी थे। वे जनता को लूटने वाली उन सभी तत्वों को पहचानते थे जो धर्म और देश–सेवा का मुखौटा लगाकर जनता को चुस्ती रहती है। वे भारतीय जनता के उज्जवल भविष्य की पेशगी थे। 5 डॉ0 शर्मा ने लिखा है कि– 'प्रेमचंद की आवाज सुनकर हमें अपने देश और जनता पर गर्व होता है, उस जातीय संस्कृति पर गर्व होता है, जिसे प्रेमचंद सँवार रहे थे। प्रेमचंद की आवाज उस समय उठी थी जब पहले महायुद्ध में मानवध्वंसी तोपों की गड़गड़ाहट हवा में गूंज रही थी आज भी जब विश्व पर तीसरे महायुद्ध के बादल छाए हुए हैं उस स्वाधीनता–संग्राम के सैनिक की वाणी विश्व शांति की रक्षा के लिए जनता का आह्वान करती है। प्रेमचंद की आवाज भारत की अजेय जनता की आवाज है। इसलिए प्रेमचन्द आज भी हमारे साथ हैं। 6

डॉ0 शर्मा की निराला–सम्बन्धी समीक्षा उनके समीक्षक–व्यक्तित्व के चरम उत्कर्ष की साक्षी है। तीन खण्डों में 'निराला की साहित्य साधना लिखा। शर्मा ने निराला के गद्य को भी उचित महत्व दिया है। डॉ0 शर्मा ने कहा है कि – निराला की रचना–प्रक्रिया का स्त्रोत है।, उनका भावबोध। यह भावबोध उनकी विचारधारा से सम्बद्ध है। किन्तु उसका प्रतिविम्ब नहीं है। निराला का स्वाधीनता–प्रेम उनके साहित्य में अप्रत्याशित नये–नये रूपों में व्यक्त होती है। उनकी आस्था के प्रतीक अनेक हैं, उनका अधिष्ठान एक है। उनकी दार्शनिक मान्यताएँ अनेक अन्तर्विरोधों को पार करती हुई नारी और प्रकृति के मोहक चित्रों के साथ साहित्य में व्यक्त होता है। नए मानवतावाद के प्रतिष्ठापक निराला के साहित्य में मनुष्य वीर, क्रान्तिकारी योद्धा, कवि, निरन्तर, संघर्षशील, साथ ही अन्तर्द्वन्द्व, ग्लानि और पराजय से पीड़ित साधारण मनुष्य भी है। निराला सौन्दर्य और उल्लास के कवि हैं, दुख और मृत्यु के भी। 7 डॉ0 शर्मा ने तीन कवियों–मुक्तिबोध, शमशेर और नागार्जन का मुल्यांकन किया है। मुक्तिबोध में उनके आत्म–संघर्ष के अनेक स्तर हैं। एक स्तर है– निम्न वर्ग की भूमि को छोड़कर सर्वहारा वर्ग से तादात्म्य स्थापित करने का। दूसरा स्तर है– मन के दुःस्वप्नों–पाप–बोध, मृत्यु–चिन्तन, आसामान्य मानसिक स्थिति से कनकलकर स्वयं को और संसार को वस्तुगत रूप से देखने का। तीसरा स्तर है अपनी काव्यकला को निरन्तर विकसित करने का। 8 मुक्तिबोध और शमशेर के आत्म–संघर्ष की तुलना करते हुए डॉ0 शर्मा कहते हैं कि – 'मुक्तिबोध मनोविश्लेषण शास्त्र से प्रभावित होकर अन्तर्मन की गुफा में ज्ञान के मणि और रत्न ढूँढ़ते थे और शमशेर इतने आत्म–मुग्ध नहीं, जितने मुक्तिबोध थे। मुक्तिबोध अस्तित्ववाद की ओर खिंचे और अपने–पराये अनेक पापों का मैल मन से धोते रहे। शमशेर नयी कविता के उन तमाम लेखकों से अलग हैं तो अस्तित्वाद से

प्रभावित है। उनका आत्म–संघर्ष है, उत्तर छायावादी काव्यबोध को लेकर। 9 नागार्जुन का काव्य इसलिए महत्वपूर्ण है कि उसमें दृढ़ क्रान्ति भावना विद्यमान है। वह लोक–संस्कृति के निकट है। आलाचकों ने चाहे नागार्जुन के विषय में कम लिखा हो किन्तु कवियों ने उन्हें काव्य का विषय बना दिया है।

भाषा–चिन्तन

डॉ0 शर्मा भाषा–विज्ञान के अध्ययन की अब तक की प्रचलित सभी पद्धतियों–विवरणात्मक भाषा विज्ञान, ऐतिहासिक भाषा–विज्ञान, परिणामी भाषा–विज्ञान, समाजीभाषा–विज्ञान (सोश्योलिंग्विस्टिक्स) को किसी न किसी विन्दु पर त्रुटिपूर्ण मानते हैं। आपकी दृष्टि में भाषा संस्कृति का एक अंग है। इसलिए उसके विकास का अध्ययन संस्कृति के विकास के आधार पर ही किया जाना चाहिए। आपकी मान्यता है–'भाषा का अध्ययन उसकी ध्वनि–प्रकृति, भाव–प्रकृति और मूल शब्द–भण्डार को दृष्टि में रखकर करना चाहिए आदिम साम्यवादी व्यवस्था से लेकर आधुनिक जातियों कि निर्माण तक समाज के गठन में उसके ढांचे मेंख वर्गों के परस्पर सम्बन्ध में, अनेक समाजों से संघर्ष सा हेलमेल में जो परिवर्तन हुए हैं, वे सब भाषा में प्रतिविम्बित होते हैं और उसका विकास निर्धारित करते हैं। 10 भारोपीय परिवार की संस्कृत, लैटिन, ग्रीक, स्लाब आदि भाषाएं वस्तुतः स्वतन्त्र कुलो की भाषाएं हैं। आर्येतर भाषा–समुदायों के ज्ञान के बिना न तो भारतीय आर्य भाषाओं का विवेचन सम्भव है न यूरोप की भाषाओं का।

मूल्यांकन

डॉ0 शर्मा के विवेचन–पद्धति पर भी आचार्य शुक्ल का प्रभाव स्पष्ट है। अपने विचारों को तर्कपूर्ण शैली में सोदाहरण सामने रखते हैं। आवश्यकतानुसार प्रतिपक्ष की मान्यताओं का खण्डन करते हैं। अपने प्रश्न को उभारने के लिए तुलनात्मक विवेचन के साथ ही व्यंग्य, विद्रूप और भर्त्सना से भी काम लेते हैं किन्तु अन्त में अपने तम को ही प्रामाणिक मानकर दो टूक निर्णय करते हैं।

डॉ0 शर्मा भाववादी चिन्तन के विरूद्ध उनकी धारणाएँ बद्धमूल हो चुकी हैं। वस्तुतः भाव–वाद का द्वन्द्व भी समाप्त होना चाहिए। अमूर्त तत्वों की कल्पना भी मूर्त के आधार पर ही की जाती है। गोचर जगत् के संघर्षों से ऊबरकर ही मनुष्य अगोचर और रहस्मय लोक की कल्पना करता है। वह भी उसकी आकांक्षा की ही सृष्टि है। इसी प्रकार अमूर्त और अगोचर के साथ व्यक्तिगत सम्बन्ध स्थापित करते की आकांक्षा से ही वह उसे मूर्त कर लेता है। इसलिए दोनों सृष्टियाँ मानवीय ही कही जायेगी। पदार्थवाद को महत्व इसलिए दिया जाता है कि इसके स्वीकार से सामाजिक व्यवस्था में परोक्ष सत्ता के हस्तक्षेप का आधार खत्म हो जाता है और सारी विषमता के कारण रूप में मनुष्य आ जाता है। तब किसी से यह नहीं कहा जा सकता कि गरीब और अमीर बनाने वाला कोई और है। ऐसी स्थिति में शोषित और पीड़ित वर्ग को न्याय के लिए संघर्ष करने का ठोस आधार मिल जाता है। यदि भाववादी चिन्तक शुद्ध चैतन्य को सामाजिक भेद–भाव का नियामक न मानकर शुद्ध मुक्त, सर्व–निरपेक्ष तत्वमात्र प्रमाणित करें और सामाजिक भेद–भाव के सभी आयामों का मूल कारण मनुष्य को ही मानें तो पदार्थवाद और भाववाद की दूरी व्यवहार के धरातल पर कम हो सकती है। वस्तुतः सामाजिक न्याय के मार्ग में पुनर्जन्म और कर्म–सिद्धान्त की मान्यता विशेष रूप से बाधक हुई है। ईश्वर की सत्ता न मानने वाले दार्शनिक भी दससे मुक्त नहीं हो सके हैं। सभी भाववादी विचारक समता विरोधी रहे हों, ऐसा भी नहीं कहा जा सकता है। आखिर कबीर जैसा क्रान्तिकारी भी भाववादी ही था। ध्यान रखना होगा कि मनुष्य की सर्वश्रेष्ठता का घोष करने वाले व्यास पदार्थवादी नहीं थे। हाँ, यह अवश्य सत्य है कि हमारा व्यापक सरोकार गोचर और यथार्थ जगत से ही है। जन साधारण के सुख–दुख, योग–क्षेम, जय–पराजय आदि का मूल स्रोत यथार्थ जगत से ही है। अतः जन साधारण को केन्द्र में रखकर रचित साहित्य भी यथार्थ जगत् से ही सम्बद्ध होना चाहिए। यथार्थ जगत् की समस्याएं समाज की स्थिति और व्यवस्था से जुड़ी हुई है। इसलिए ऐसी व्यवस्था, जो सामान्य जन के हितों की उपेक्षा करने वाली हो, उसका विरोध होना चाहिए। यह विरोध कला और साहित्य के स्तर पर रचनात्मक तरीके से भी हो सकता है। उन्होंने साहित्य की गतिशील चेतना का विश्लेषण किया है। बद्धमूल जीवन–दृष्टि के बाबजूद डॉ0 शर्मा का विवेक आग्रह–ग्रस्त नहीं है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. आचार्य रामचन्द्र शुक्ल और हिन्दी आलोचना, पुष्ठ–222, राजकमल प्रकाशन, 2017, ISBN: 9788126705726
2. भारतेन्दु युग और हिन्दी भाषा की विकास–परम्परा, तीसरे सं0 की भूमिका, राजकमल प्रकाशन, 2017, ISBN: 9788126712571
3. महावीर प्रसाद द्विवेदी और हिन्दी नव जागरण, पुष्ठ–227, राजकमल प्रकाशन, 2018, ISBN: 9788126703753
4. आचार्य रामचन्द्र शुक्ल और हिन्दी आलोचना, पुष्ठ–228, राजकमल प्रकाशन, 2017, ISBN: 9788126705726
5. प्रेमचन्द्र और युग, दूसरे सं0 की भूमिका, राजकमल प्रकाशन, 2016, ISBN: 9788126705047
6. प्रेमचन्द्र और युग, दूसरे सं0 की भूमिका, पुष्ठ–158, राजकमल प्रकाशन, 2016, ISBN: 9788126705047
7. निराला की साहित्य–साधना, भाग–2, भूमिका, राधाकृष्ण प्रकाशन, 2018, ISBN: 9788171192854
8. नयी कविता और अस्तित्ववाद, पुष्ठ–231, राजकमल प्रकाशन, 2018, ISBN: 9788126705719
9. नयी कविता और अस्तित्ववाद, पुष्ठ–83, राजकमल प्रकाशन, 2018, ISBN: 9788126705719
10. भाषा और समाज, भूमिका, राजकमल प्रकाशन, 2017, ISBN: 9788126705320

-------****-------